किये जाने का भी डर बना रहता है।

(5) धर्म ग्रामीणों के **जीवन में पवित्रता और आचरण में शुद्धता** लाने के लिए भी उत्तरदायी है। लोग धर्मच्युत होने के भय से अपवित्र आचरणों का त्याग कर शुद्ध एवं पवित्र आचरणों का पालन करते हैं और अपने से धर्म विरोधी कार्य, अपराध या पाप होने पर पुनः शुद्ध होने के लिए प्रायश्चित करते हैं अथवा विभिन्न प्रकार के संस्कार और कृत्यों का आयोजन करते हैं।

(6) **धर्म ग्रामीणों में सद्गुणों का विकास** करता है। धार्मिक आदर्श ग्रामीणों के जीवन का आदर्श होता है। धार्मिक नियम लोगों को दया, सहानुभूति, प्रेम, सहिष्णुता, अहिंसा और सहयोग, आदि सद्गुणों का पालन करने के लिए प्रेरित करते हैं।

(7) धर्म ग्रामीणों की **दैनिक एवं सामाजिक समस्याओं का समाधान** भी करता है। व्यक्ति जब चारों ओर से निराश हो जाता है तो वह ईश्वर की शरण में आता है। धार्मिक कथाओं में ईश्वर के दयालु स्वभाव एवं अपने भक्तों की सहायता आदि के वर्णन होते हैं। धर्म लोगों को मानसिक तनावों एवं संघर्षों से छुटकारा दिलाता है।

किन्तु कभी-कभी धर्म के नाम पर संघर्ष, तनाव दंगे और विवाद भी होते हैं। ऐसी स्थिति में धर्म समाज में विघटन एवं तोड़-फोड़ को जन्म देता है। वह सामाजिक समस्याओं को जन्म देता है। कभी-कभी धर्म वैज्ञानिकता तथा तर्क से भी मानव को दूर ले जाता है। वर्तमान में ग्रामीण धर्म में अनेक परिवर्तन आ रहे हैं। धार्मिक संकीर्णता समाप्त हो रही है और उनमें मानवतावाद प्रवेश कर रहा है। धर्म में अब लौकिक तत्वों का समावेश भी होने लगा है।

10. ग्रामीण शिक्षा
(RURAL EDUCATION)

मानव द्वारा आदि काल से ही ज्ञान का संचय किया जाता रहा है। प्रत्येक नयी पीढ़ी को पुरानी पीढ़ी द्वारा कुछ ज्ञान सामाजिक विरासत में प्राप्त होता है और कुछ वह स्वयं अर्जित करता है। मानव की प्रत्येक पीढ़ी में सीखने की प्रक्रिया और हस्तान्तरण द्वारा ज्ञान की वृद्धि होती गयी है। ज्ञान की यह परम्परात्मक शृंखला ही शिक्षा है जिसके द्वारा मानव ने अपनी मानसिक, आध्यात्मिक और सामाजिक प्रगति की है। शिक्षा ने ही मानव को पशु-स्तर से ऊंचा उठाया है और सांस्कृतिक प्राणी बनाया है। शिक्षा की अवस्थाएं किसी देश के विकास की स्थिति को प्रकट करती हैं। एक देश में अशिक्षित एवं अज्ञानी लोगों की संख्या के आधार पर ही उसकी विकसित या अविकसित अवस्था का ज्ञान किया जा सकता है। शिक्षा के अभाव में ज्ञान और विज्ञान दोनों का अभाव होगा। शिक्षा को परिभाषित करते हुए **दुर्खीम** लिखते हैं, "शिक्षा अधिक आयु के लोगों द्वारा ऐसे लोगों के प्रति की जाने वाली क्रिया है जो अभी सामाजिक जीवन में प्रवेश करने के योग्य नहीं हैं। इसका उद्देश्य शिशु में उन भौतिक, बौद्धिक और नैतिक विशेषताओं का विकास करना है जो उसके लिए सम्पूर्ण समाज और पर्यावरण से अनुकूलन करने के लिए आवश्यक है।"[1]

1 T. B. Bottomore, *Sociology*, p. 275.

फिलिप्स के अनुसार, "शिक्षा वह संस्था है जिसका केन्द्रीय तत्व ज्ञान का संग्रह है।"[1] **महात्मा गांधी** कहते हैं, "शिक्षा से मेरा अभिप्राय बच्चे के शरीर, मन और आत्मा में विद्यमान सर्वोत्तम गुणों का सर्वांगीण विकास करना है।"[2]

इन परिभाषाओं से स्पष्ट है कि शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा मानव में उन गुणों का विकास किया जाता है जिसके द्वारा वह सामाजिक व भौतिक पर्यावरण से अनुकूलन करके अपने व्यक्तित्व का विकास करता है।

भारत एक ग्राम प्रधान देश है जिसकी 74.3 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है। भारत की प्रगति के लिए यह आवश्यक है कि उसकी ग्रामीण जनसंख्या का भी विकास में योगदान हो। वर्तमान में भारत में केवल 52.21 प्रतिशत व्यक्ति ही शिक्षित हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में साक्षरता का प्रतिशत तो और भी कम है। देश की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक प्रगति के लिए यह आवश्यक है कि यहां शिक्षा का अधिकाधिक प्रसार कर प्रत्येक भारतीय को शिक्षित बनाया जाय।

ग्रामीण शिक्षा की आवश्यकता (Need of Rural Education)

भारत में शिक्षा के अभाव ने कूपमण्डूकता, अन्धविश्वास और अनेक सामाजिक, आर्थिक बुराइयों को जन्म दिया है जिनके कारण देश का चहुंमुखी विकास अवरुद्ध हुआ है। **डॉ. देसाई** ने ग्रामीण शिक्षा के औचित्य को निम्नांकित कारणों से आवश्यक माना है :

(1) **आर्थिक कारण** (Economic Reasons)—ग्रामीण अर्थव्यवस्था का कृषि, कुटीर व्यवसाय और प्रकृति से घनिष्ठ सम्बन्ध है। प्रकृति पर निर्भरता मानव को जोखिम में डालती है। प्राकृतिक परिस्थितियों का अधिकाधिक लाभ उठाने के लिए उन्हें नवीन आविष्कारों और मशीनों का ज्ञान होना चाहिए और इसके लिए उन्हें आधुनिक शिक्षा की आवश्यकता है। कृषि के नवीन उत्पादन की प्रणाली, यन्त्र, खाद, बीज, सिंचाई के साधनों, आदि का भी उन्हें ज्ञान प्रदान किया जाना चाहिए।

जब भारतीय ग्राम आत्म-निर्भर थे तो वे स्थानीय आवश्यकताओं के लिए कम मात्रा में ही उत्पादन करते थे। वर्तमान में गांव राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था से जुड़ गये हैं। अतः आवश्यकता इस बात की है कि उन्हें बाजारों तथा उत्पादन के नवीन साधनों, आदि का ज्ञान हो जो शिक्षा द्वारा ही सम्भव है।

(2) **राजनैतिक कारण** (Political Reasons)—राजनैतिक एवं प्रशासकीय कारणों से भी गांवों में शिक्षा का प्रसार आवश्यक है। प्राचीन समय में राज्य की सम्प्रभुता (Sovereignty) नाममात्र की थी और राज्य का प्रशासन गांवों में गहराई से प्रविष्ट नहीं था। स्वतन्त्रता के बाद भारत में अनेक राजनैतिक परिवर्तन हुए। संविधान ने नागरिकों को मौलिक अधिकार प्रदान किये, गांवों में लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण लागू किया गया। गांव पंचायतों, पंचायत समितियों और जिला परिषदों के द्वारा ग्रामीणों को प्रजातन्त्रीय प्रशासन में भागीदार बना दिया गया। स्वतन्त्रता ने उन पर नयी जिम्मेदारियां डाल दीं। प्रजातन्त्र में अनेक राजनैतिक दलों का उदय हुआ। ग्रामवासियों को ग्राम के विकास व न्यायिक प्रक्रिया में भाग लेने के लिए अवसर

1 "Education is the institution whose central value have to do with the acquisition of knowledge." —B. S. Phillips, *Sociology, Social Structure and Change*, p. 305.

2 "By education I mean an all round drawing out of the best in child and man body, mind and spirit."
—Mahatma Gandhi, *Harijan*, 1937.

प्राप्त हुए। अपने इन नवीन उत्तरदायित्वों एवं कर्तव्यों का ईमानदारी, निष्ठा और लगन से पालन कराने के लिए उनमें शिक्षा के माध्यम से ही जागरूकता पैदा की जा सकती है।

(3) **सामाजिक कारण** (Social Reasons)—वर्तमान में ग्रामीण समाज में अनेक परिवर्तन हो रहे हैं और अनेक नवीन जटिलताएं पैदा हुई हैं। ग्राम अनेक सामाजिक-आर्थिक समस्याओं से भी ग्रस्त हैं जिनका हल ग्रामीणों के सक्रिय सहयोग से ही सम्भव है। वर्तमान सामाजिक सम्बन्ध द्वैतीयक, औपचारिक और समझौते पर आधारित होते जा रहे हैं और प्राथमिक सम्बन्ध कमजोर होते जा रहे हैं। इन जटिल सम्बन्धों से व्यक्ति को परिचित कराने के लिए सामाजिक बुराइयों, अन्धविश्वासों, कुरीतियों तथा कूपमण्डूकता से मुक्ति दिलाने के लिए शिक्षा अनिवार्य है।

(4) **नैतिक कारण** (Ethical Reasons)—वर्तमान युग में धर्म एवं नैतिकता में भी परिवर्तन आ रहे हैं। धीरे-धीरे धार्मिक कट्टरता समाप्त होती जा रही है तथा धर्म-निरपेक्षता एवं लौकिकता में वृद्धि हो रही है। समाज में नये धार्मिक व नैतिक मूल्य प्रकट हो रहे हैं जिनका सम्बन्ध किसी जाति एवं धर्म विशेष से नहीं है। ग्रामीणों के दृष्टिकोण में भी इस सन्दर्भ में परिवर्तन लाना आवश्यक है। शिक्षा ही ग्रामीणों की धार्मिक कट्टरता और जातिवाद को समाप्त करने में सहायक सिद्ध हो सकती है। शिक्षा के द्वारा मानवतावाद का प्रसार सम्भव है।

(5) **सांस्कृतिक कारण** (Cultural Reasons)—शिक्षा के द्वारा ही संस्कृति का अध्ययन किया जाता है। वर्तमान में मानव ने अपने ज्ञान के आधार पर ही अनेक आविष्कार किये और प्रकृति पर विजय प्राप्त की है। सामाजिक ज्ञान के क्षेत्र में वर्तमान में असीम वृद्धि हुई है। कला एवं संस्कृति के क्षेत्र में भी अपार उन्नति हुई है। विश्व की इस शक्तिशाली संस्कृति को आत्मसात् करने, मानव को बौद्धिक एवं भावनात्मक जीवन को समृद्ध बनाने तथा सामाजिक प्रगति के लिए शिक्षा आवश्यक है।

(6) **अन्य कारण** (Other Reasons)—किसानों के लिए शिक्षा और भी आवश्यक है क्योंकि इसके द्वारा ही वह नवीन खादों, फसल काटने के यन्त्रों, ट्रेक्टर एवं अन्य उपकरणों के प्रयोग का ज्ञान प्राप्त कर सकेगा।

वर्तमान युग में नवीन आर्थिक एवं सामाजिक समस्याएं पैदा हुई हैं जिनका निराकरण वैदिक कालीन ज्ञान अथवा चाणक्य के अर्थशास्त्र के आधार पर नहीं वरन् नवीन शिक्षा के द्वारा ही सम्भव है।

जिस तरह से प्राचीन ज्ञान आधुनिक समस्याओं को हल करने में सहायक नहीं हो सकता, उसी प्रकार से आधुनिक ज्ञान को आत्मसात् करने के लिए प्राचीन शिक्षा की विधियां सहायक नहीं हो सकतीं। इसके लिए तो हमें नवीन शिक्षा, शब्द विज्ञान और शिक्षण संस्थाओं की आवश्यकता होगी।

यदि हमें ग्रामों में निवास करने वाली 74.3 प्रतिशत जनसंख्या को अज्ञानान्धकार के दायरे से बाहर निकालकर सुयोग्य नागरिक बनाना है और भौतिक तथा सांस्कृतिक उन्नति के मार्ग पर अग्रसर करना है तो उन्हें शिक्षित बनाना ही होगा।

भारत में ग्रामीण शिक्षा का इतिहास

भारत में ग्रामीण शिक्षा के इतिहास को हम प्रमुख तीन भागों में बांट सकते हैं—(1) पूर्व ब्रिटिश भारत में शिक्षा, (2) अंग्रेजों के काल में शिक्षा तथा (3) स्वतन्त्र भारत में शिक्षा। हम तीनों ही युगों में शिक्षा के लक्षणों पर यहां विचार करेंगे।

(1) **पूर्व ब्रिटिश भारत में शिक्षा**—पूर्व ब्रिटिश भारत की शिक्षा भरण-पोषणात्मक अर्थव्यवस्था (Subsistence Economy) पर आधारित थी। उस समय आज की तरह कृषि, उद्योग, चिकित्सा, कला और विज्ञान का ज्ञान प्रदान करने वाली विशिष्ट संस्थाएं नहीं थीं, वरन् एक व्यक्ति अपने पारिवारिक व्यवसाय को परिवार के अनुभवी लोगों द्वारा ही सीखता था। व्यक्ति का अधिकांश जीवन परिवार एवं जाति के दायरे में ही सीमित था। अतः जाति और परिवार ही सामाजिक व्यवहार, कला और अनुकूलन की शिक्षा प्रदान करते थे।

ग्रामीण लोग पुरोहित, कथाकार तथा सन्त लोगों से नैतिक एवं बौद्धिक शिक्षा प्राप्त करते थे। परिवार, जाति और ग्राम संगठनों के द्वारा ही उनके लौकिक व धार्मिक समारोह, त्यौहारों और उत्सवों, आदि का आयोजन किया जाता था। जिनमें ग्रामीण लोग भाग लेते और अपनी सौन्दर्यात्मक शिक्षा प्राप्त करते।

पूर्व ब्रिटिश कालीन शिक्षा धर्म प्रधान थी। जिसमें संसार की उत्पत्ति से लेकर विभिन्न प्राकृतिक घटनाओं की व्याख्या ईश्वर और धर्म के आधार पर ही की जाती थी। मानव और जीवों की उत्पत्ति, भूकम्प, बाढ़, आंधी, भूचाल, महामारियों, आदि को देवी-देवताओं द्वारा ही जनित माना जाता था। ग्रहण का कारण राहु और केतु द्वारा सूर्य को दबा लेना माना गया। भूकम्प का कारण है कि शेषनाग का गति करना और शेषनाम के फन पर ही पृथ्वी को टिकी हुई माना गया। चेचक को शीतला माता का प्रकोप माना गया। यह प्राचीन शिक्षा विभिन्न प्राकृतिक शक्तियों की पूजा, आत्मावाद, जीववाद तथा वृक्षों, पर्वतों और नदियों में देवी-देवता के निवास में विश्वास करने को प्रोत्साहित करती थी। स्पष्ट है कि प्राचीन शिक्षा में धर्म की प्रधानता थी। प्राचीन इतिहास में पुराण विद्या का प्राधान्य था जिसमें देव नृपों के अलौकिक कार्य-कलापों का उल्लेख था। उस समय का इतिहास हमें उस काल के लोगों के सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक जीवन का तार्किक वर्णन प्रदान नहीं करता। प्राचीन सामाजिक शिक्षा व्यक्ति को परिवार, जाति एवं समुदाय के अनुकूलन के योग्य बनाती थी और व्यक्ति पूर्ण रूप से इन पर आधारित था। वह शिक्षा वैयक्तिक स्वतन्त्रता और व्यक्तित्व के विकास में सहायक नहीं थी। सामाजिक शिक्षा में अधिकारवादी भावना की प्रधानता थी।

प्राचीन शिक्षा जिसमें कृषि और विभिन्न व्यवसायों का ज्ञान दिया जाता था, वंशानुगत थी जो मौखिक रूप से पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तान्तरित होती थी। उस समय तकनीकी संस्थाएं तथा संगीत और कला से सम्बन्धित स्कूल नहीं थे। कहीं-कहीं नगरों में ही कुछ शैक्षणिक संस्थाएं पायी जाती थीं।

(2) **ब्रिटिश शासन में शिक्षा**—ब्रिटिश शासन काल में अंग्रेजों के सम्पर्क और प्रभाव के कारण प्राचीन शिक्षा के स्वरूप में परिवर्तन आया और ग्रामीणों को आधुनिक शिक्षा का ज्ञान भी प्राप्त होने लगा। यह शिक्षा धर्मनिरपेक्ष व उदारवादी थी। इस शिक्षा का प्रसार गांवों की अपेक्षा नगरों में उच्च और मध्यम वर्ग के लोगों तक ही सीमित था। गांवों में तो बहुत कम शिक्षण संस्थाएं थीं और शिक्षा के महंगी होने के कारण सभी उसका लाभ नहीं उठा सकते थे। ब्रिटिश शिक्षा का उद्देश्य अपने प्रशासन और औद्योगिक तन्त्र के लिए बाबुओं को जुटाना था न कि ऐसे नागरिक उत्पन्न करना जो ज्ञान का राष्ट्र की भौतिक व सांस्कृतिक उन्नति में उपयोग करें। इस शिक्षा में राष्ट्र भावना एवं आदर्शों का अभाव था। किन्तु इस

शिक्षा ने भारतीयों को उदारवादी एवं बुद्धिवादी विचारों के सम्पर्क में ला दिया और उन्हें प्राचीन अधिकारवादी भावना से मुक्ति दिलायी।

आधुनिक शिक्षा का लाभ ग्रामीणों को कम मिल पाया, क्योंकि अंग्रेजों ने उनकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया। डेढ़ सौ वर्षों के ब्रिटिश राज में 86 प्रतिशत जनसंख्या अशिक्षित थी। यह तथ्य अंग्रेजों की शिक्षा के प्रति उपेक्षा की नीति को प्रदर्शित करता है। अंग्रेजों के समय शिक्षा देने वाली अनेक संस्थाएं थीं जो सरकार, ईसाई मिशनरियों, भारतीय समाज सुधार संगठनों और राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा खोली गयी थीं, किन्तु ये सभी संस्थाएं भी ग्रामीण क्षेत्र में कोई विशेष सफलता प्राप्त नहीं कर सकीं, क्योंकि इनमें से ग्रामीण शिक्षा की समस्या पर कोई विचार नहीं किया गया था।

(3) **स्वतन्त्र भारत में शिक्षा**—स्वतन्त्र भारत में ग्रामीण शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया गया। परिणामस्वरूप ग्रामवासियों ने भी राष्ट्रीय प्रगति में अपना योगदान दिया है। ग्रामीण अशिक्षा को दूर कर उन्हें वर्तमान से परिचित कराना ही शिक्षा का मूल उद्देश्य है जिससे कि वे राष्ट्र-निर्माण में सक्रिय रूप से भाग ले सकें। राष्ट्र-निर्माण में असंख्य ग्रामीणों का सक्रिय सहयोग प्राप्त करने के लिए उन्हें नवीन ज्ञान से सुसज्जित करना होगा। **ग्रामीण शिक्षा की सफलता के मार्ग में हमारे सम्मुख चार समस्याएं हैं** जिन्हें हमें सुलझाना होगा, वे हैं—

(अ) शिक्षा का लक्ष्य निर्धारित करना, (ब) शिक्षा की व्यवस्था के लिए प्रशासकीय ढांचे का निर्माण, (स) शिक्षा के प्रसार के लिए तकनीकी एवं अन्य साधनों को जुटाना, (द) उत्तरदायी कार्यकर्ता एवं पूंजी का प्रबन्ध। इन चारों समस्याओं का हम यहां संक्षेप में उल्लेख करेंगे।

(अ) शिक्षा के लक्ष्य निर्धारण की समस्या—वर्तमान नगरीय शिक्षा विद्यार्थियों के शारीरिक, भावनात्मक एवं नैतिक विकास के स्थान पर बौद्धिक विकास पर ही अधिक बल देती है। फलस्वरूप बच्चे का एकपक्षीय विकास ही होता है, सर्वांगीण नहीं। वर्तमान शिक्षा बाल्यकाल से वयस्क अवस्था तक चलती है और इसमें सामान्य ज्ञान पर अधिक जोर दिया गया है। वास्तविक जीवन की समस्याओं को हल करने में यह सहायक नहीं है। इसलिए शिक्षा प्राप्ति के बाद जब छात्रों को जीवन की वास्तविकताओं का सामना करना पड़ता है तो वे कठिनाई अनुभव करते हैं।

शिक्षा कैसी हो, इस बात को लेकर भी विवाद है। कुछ लोग उदारवादी एवं मानवीय शिक्षा की वकालत करते हैं तो कुछ तकनीकी शिक्षा की। कुछ लोग शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास मानते हैं तो कुछ नागरिकों में गुणों एवं सदाचार का विकास करना। कुछ ऐसे व्यक्ति भी हैं जो धार्मिक व लौकिक शिक्षा के मिश्रित रूप पर जोर देते हैं जबकि कुछ व्यक्ति केवल धर्मनिरपेक्ष शिक्षा चाहते हैं। शिक्षाशास्त्रियों का एक समूह बौद्धिक, भावनात्मक, नैतिक व सामाजिक शिक्षा के समन्वयात्मक रूप की आवश्यकता पर बल देता है जिससे व्यक्ति का सर्वांगीण विकास सम्भव हो सके।

कई समाज विचारक वर्तमान शिक्षा के एकपक्षीय स्वरूप की आलोचना करते हैं। उनका विचार है कि शिक्षा में हाथ, हृदय और मस्तिष्क तीनों का समन्वय हो जिससे कि ऐसे नागरिकों का निर्माण होगा जो स्वस्थ, शक्तिशाली, समृद्ध, सचेत और सामाजिक सहयोग प्रदान करने वाले होंगे, वे समाज के लिए बहुमूल्य सम्पत्ति होंगे। भारतीय संविधान में भी

राज्य का उद्देश्य सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म, उपासना, आदि की स्वतन्त्रता और अवसर की समानता पर निर्भर जनतन्त्र की रचना निर्धारित किया गया है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए शिक्षा में इन तत्वों का समावेश आवश्यक है कि भावी शिक्षा योजना ऐसी हो जो ग्रामीण समाज के निर्माण और उनकी आवश्यकताओं को जुटाने में सहायक हो। वर्तमान शिक्षा बाजार-अर्थव्यवस्था और पूंजीवादी समाज के अनुरूप है।

हमें शिक्षा की ऐसी नीति अपनानी होगी जो सामाजिक सहयोग एवं एकता पर बल दे और असामाजिक व्यक्तिवाद से मुक्ति दिलाये। ग्रामीण शिक्षा के स्वरूप निर्धारण में ग्रामीण समाजशास्त्रियों का सहयोग प्राप्त किया जाना चाहिए।

(ब) शिक्षा का प्रशासकीय ढांचा—शिक्षा योजना की सफलता शिक्षा प्रदान करने वाले प्रशासकीय ढांचे पर निर्भर है। शिक्षा के लक्ष्य चाहे कितने ही वैज्ञानिक एवं आदर्शवादी क्यों न हों, उनकी पूर्ति उपयुक्त प्रशासन के अभाव में सम्भव नहीं है। करोड़ों ग्रामवासियों की शिक्षा के लिए हमें विस्तृत प्रशासनिक संगठन की आवश्यकता है। प्राथमिक, माध्यमिक और उच्चतम शिक्षा का समन्वय किया जाना चाहिए और निरक्षर प्रौढ़ों के लिए भी उचित व्यवस्था की जानी चाहिए। गांवों में शिक्षा से सम्बन्धित अनेक समस्याएं हैं—जैसे क्या वहां स्कूल खुली हवा में चलाये जायें अथवा बन्द कमरों में, ग्रामीणों को विशिष्ट शिक्षा प्रदान की जाय अथवा बहुउद्देशीय, स्कूल के समय को कृषि एवं शिल्पकारी कार्य से किस प्रकार समन्वित किया जाय, शिक्षा की प्रणाली और पाठ्यक्रम क्या हो, आदि? इन सभी का उचित समाधान आवश्यक है।

(स) शिक्षा के विस्तार के तकनीकी एवं अन्य साधन—पिछले कुछ वर्षों में मानव ने तकनीकी क्षेत्र में बहुत प्रगति की है। उसने रेल, मोटर, वायुयान, टेलीविजन, टेलीफोन, रेडियो, सिनेमा और अन्य कई चमत्कारपूर्ण आविष्कार किये हैं। इन आविष्कारों ने राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सहयोग पैदा किया है। प्राचीन समय में स्कूल ही शिक्षा प्रदान करने का कार्य करते थे, किन्तु अब इन नवीन साधनों ने भी इस कार्य में सहयोग दिया है। ग्रामीण शिक्षा के लिए स्कूल, पुस्तकालय, अजायबघर, सिनेमा, रेडियो, टेलीविजन, भ्रमणशील वाहन, जिमनेजियम तथा खेलों के केन्द्रों का उपयोग किया जाना चाहिए जिससे ग्रामीण जनता की शिक्षा व संस्कृति के प्रसार में तीव्रता आ पायेगी। शिक्षा के इन नवीन साधनों द्वारा नयी शिक्षा का प्रसार बढ़ेगा।

(द) उत्तरदायी कार्यकर्ता एवं पूंजी का प्रबन्ध—ग्रामीण शिक्षा के उपर्युक्त कार्यक्रम को लागू करने में सबसे बड़ी कठिनाई पूंजी और सहायक कार्यकर्ताओं की है, जिनके अभाव में ग्रामीण शिक्षण सम्भव नहीं हो पायेगा। किसी भी राष्ट्र के आर्थिक साधन देश में उपलब्ध प्राकृतिक स्रोतों एवं समाज की उत्पादन शक्ति पर निर्भर हैं। समाज जब आर्थिक व भौतिक रूप से समृद्ध होगा तब ही वह समुदाय के निर्माण, शिक्षण एवं सुधार के कार्यक्रम में पूंजी लगा सकेगा। जनता की भौतिक समृद्धि सामाजिक व आर्थिक उन्नति से सम्बद्ध है। संस्कृति तो सामाजिक अर्थव्यवस्था की सुगन्ध है।

ग्रामों में शिक्षा प्रदान करने के लिए कार्यकर्ताओं को जुटाना भी एक बहुत बड़ी समस्या है। इसके लिए बड़ी संख्या में ऐसे शिक्षकों की आवश्यकता होगी जो आधुनिक ज्ञान से सुसज्जित एवं उत्साह से भरे हुए हों।

ग्रामीण शिक्षा में नवीन प्रयोग (New Experiments in Rural Education)

भारत पर अंग्रेजों द्वारा थोपी गयी शिक्षा प्रणाली का अनेक विचारकों ने विरोध किया और उसमें सुधार के सुझाव रखे। ग्रामीण शिक्षा को नवीन रूप देने की दिशा में गांधीजी ने 1938 में वर्धा योजना प्रस्तुत की जो बुनियादी शिक्षा के नाम से भी जानी जाती है।

(अ) बुनियादी शिक्षा (Basic Education)—बुनियादी शिक्षा में बच्चे के शरीर, मन और आत्मा के श्रेष्ठतम विकास पर जोर दिया गया है। केवल साक्षरता ही शिक्षा नहीं है, वरन् उसे दस्तकारी सिखाकर उत्पादन कार्य के योग्य बनाना और बच्चों में स्वावलम्बन पैदा करना शिक्षा का ही कार्य है। इस शिक्षा में प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा को मिला दिया गया और शिक्षा को ग्रामोन्मुख बनाकर बच्चों को हस्तकला व उद्योगों की शिक्षा देने का प्रयास किया गया। सफाई, स्वास्थ्य रक्षा और भोजन के साधारण नियमों के ज्ञान के साथ-साथ माता-पिता की सहायता करने का लक्ष्य भी बुनियादी शिक्षा का उद्देश्य है। सात वर्ष तक बच्चे पर किये गये खर्च के बाद वे कमाने योग्य बनें, यही इस शिक्षा का उद्देश्य है।

गांधीजी की उक्त शिक्षा योजना को स्वीकार कर लेने के बाद **डॉ. जाकिर हुसैन** की अध्यक्षता में एक कमेटी बनी जिसने पाठ्यक्रम, आदि पर 1937-38 में एक विस्तृत प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जो **'वर्धा योजना'** के नाम से प्रसिद्ध है। इसी के परिष्कृत रूप को बुनियादी शिक्षा कहा गया। इस शिक्षा की निम्नांकित विशेषताएं हैं :

(i) प्राथमिक शिक्षा निःशुल्क हो, (ii) शिक्षा का माध्यम मातृभाषा हो, (iii) शिल्पकला सिखायी जाय, (iv) बालक की आवश्यकाओं व रुचि के अनुसार शिक्षा दी जाय, (v) इसमें शिक्षा का कार्यकाल सात वर्ष तक किया गया जिसे ग्यारह से तेरह वर्ष की आयु में बच्चे को पूर्ण कर लेना चाहिए, (vi) विभिन्न विषयों को पृथक्-पृथक् न पढ़ाकर उनका समन्वय किया जाय, (vii) यह शिक्षा आत्मनिर्भरता पर जोर देती है। प्रत्येक शिक्षण संस्था एक उद्योगशाला के रूप में कार्य करेगी जिससे बेकारों की संख्या में वृद्धि न हो, (viii) प्रत्येक शिक्षण संस्था अपना खर्च स्वयं वहन करने में सक्षम हो, (ix) यह शिक्षा सामुदायिक जीवन पर जोर देगी, इसमें अस्पृश्यता एवं जाति भेद-भाव का कोई स्थान नहीं होगा तथा (x) वर्तमान शिक्षा प्रणाली के प्रकार की परीक्षा प्रणाली का इसमें अभाव होगा।

इस शिक्षा के अन्तर्गत मातृभाषा, गणित, सामाजिक विज्ञान जैसे इतिहास, भूगोल, नागरिकशास्त्र, सामान्य विज्ञान, कला, चित्रकारी, संगीत, हिन्दी, खेल और शारीरिक व्यवसाय, आदि के अध्ययन को सम्मिलित किया गया है।

बुनियादी शिक्षा के प्रयोग का मूल्यांकन करने से प्रकट होता है कि यह शिक्षा भारत के अनुकूल है। किन्तु कुछ विद्वानों ने इसकी कुछ कमियों की ओर भी ध्यान आकृष्ट किया है; जैसे इसमें दस्तकारी शिक्षा पर ही अधिक बल दिया है, अन्य विषयों पर नहीं, यह कताई-बुनाई पर भी विशेष जोर देती है, किन्तु इससे औद्योगिक भारत की बेकारी की समस्या हल नहीं हो सकेगी। नगरों में भी यह शिक्षा सफल नहीं हो पायेगी। इन स्कूलों में निर्मित वस्तुओं के उपयोग की भी समस्या पैदा होगी। आज का युग वैज्ञानिक व यान्त्रिक युग है। प्रत्येक

देश मशीन व ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में आगे बढ़ रहा है। बुनियादी शिक्षा में नवीन पर्यावरण से अनुकूलन करने सम्बन्धी ज्ञान का अभाव है। यह हमें आगे ले जाने के स्थान पर पीछे की ओर धकेलती है।

(ब) समाज एवं प्रौढ़ शिक्षा—युवा ग्रामीणों को सामाजिक शिक्षण प्रदान करने के लिए समाज व प्रौढ़ शिक्षण की योजना प्रारम्भ की गयी। इस शिक्षा का उद्देश्य नागरिकों में चेतना एवं एकता की भावना को उत्पन्न करना है और उन्हें सामाजिक वातावरण में रहने के योग्य बनाना है। इस शिक्षा में प्रौढ़ों को पढ़ना-लिखना और गणित तथा विश्व की घटनाओं का ज्ञान कराया जाता है। जहां बुनियादी शिक्षा का उद्देश्य बच्चे का निर्माण करना है, वहाँ समाज-शिक्षा का उद्देश्य प्रौढ़ों का शारीरिक और मानसिक विकास करना है।

समाज शिक्षा में प्रौढ़ों को साक्षर बनाया जाता है। उन्हें नागरिकता का प्रशिक्षण दिया जाता है। व्यक्तिगत स्वास्थ्य और गांव की सफाई के बारे में बताया जाता है। प्रौढ़ों में सामुदायिक भावना का निर्माण किया जाता है, उन्हें प्रजातन्त्र का ज्ञान दिया जाता है और आत्म-निर्भर बनने के लिए समय के सदुपयोग की शिक्षा दी जाती है। उनके मनोरंजन के लिए भजन, कीर्तन व सांस्कृतिक कार्यक्रमों की व्यवस्था की जाती है। उन्हें विभिन्न प्रकार के हस्त-उद्योगों की शिक्षा दी जाती है।

प्रौढ़ शिक्षा के लिए गांवों में रात्रि पाठशालाओं, चलचित्रों, रेडियो, प्रदर्शनी, नाटक, खेलकूद और प्रौढ़ साहित्य का सहारा लिया जाता है।

बुनियादी शिक्षा व समाज शिक्षा को सुचारु रूप से चलाने के मार्ग में अनेक समस्याएं भी हैं जो पूंजी, प्रशिक्षित अध्यापकों, आदि की कमी से सम्बन्धित हैं। ग्रामीण शिक्षा को सफल बनाने के लिए यह आवश्यक है कि विशाल वैज्ञानिक, शैक्षणिक व सांस्कृतिक योजना हो, उसका विस्तृत प्रशासन तन्त्र हो, विभिन्न तकनीकी साधनों की प्रचुरता हो, आधुनिक ज्ञान से प्रशिक्षित अध्यापक हों और पर्याप्त मात्रा में धन हो।